1 भारतीय संगीत का सामान्य परिचय

कलाओं को मूलभूत रूप से दो भागों में वर्गीकृत किया गया है— ललित कलाएँ एवं अन्य उपयोगी कलाएँ। ललित कलाओं के पाँच प्रकार माने गए हैं— संगीत, काव्य, चित्रकला, मूर्तिकला एवं स्थापत्य कला। सभी ललित कलाओं में संगीत को श्रेष्ठ माना गया है। यह वह कला है, जिसमें स्वर और लय द्वारा हम अपने भावों को प्रकट करते हैं।

"गीत, वाद्य तथा नृत्य त्रय सगीतमुच्यते।"

संगीत रत्नाकर

श्लोक 21, स्वरगताध्याय:

भावार्थ— गायन, वादन तथा नृत्य, इन तीनों कलाओं के समावेश को संगीत कहते हैं। संगीत शब्द सुनते ही हमें पसंद आने वाले गीत, वाद्य यंत्रों पर बजती धुन, नृत्य में थिरकते पैर— ऐसी बातों का आभास होता है। इसीलिए यह जानना आवश्यक है कि संगीत में गीत, वाद्य व नृत्य— तीनों समन्वित हैं।

संगीत का मूल आधार 'स्वर' और 'लय' है। 'स्वर' और 'लय' के साथ भाषा या कविता या पद का समन्वय, संगीत को अनूठा आकर्षण प्रदान करती है। संगीत की अभिव्यक्ति विभिन्न प्रकार की गायन और वादन शैलियों द्वारा की जाती है। संगीत हमारी भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग है। यह अभिव्यक्ति का एक ऐसा माध्यम है जो व्यक्ति को एक-दूसरे के साथ जोड़ता है। केवल मनुष्य एवं जीव-जंतु ही नहीं वरन्, पेड़-पौधों पर भी संगीत का प्रभाव पड़ता है। संगीत एक ऐसी औषधि है जो मनोवैज्ञानिक रूप से चित्त को एकाग्र कर उसे संतुलित बनाने की क्षमता रखती है।

चित्र 1.1—कला उत्सव— दिव्यांग बच्चों द्वारा समूह गीत की अनोखी प्रस्तुति

© NCERT not to be republished

शास्त्रीय संगीत

शास्त्रों में वर्णित नियमों के आधार पर निर्मित संगीत को शास्त्रीय संगीत कहा जाता है। चित्रकला, शिल्पकला, वास्तुकला आदि कलाओं का विकास पत्थर, पत्तों तथा कागज़ों पर बनाए गए चित्रों के रूप में विकसित हुआ है। संगीत ध्वनि प्रधान होता है, जिसमें शब्द की अपेक्षा ध्वनि के प्रयोग के रूप में स्वरों के उतार-चढ़ाव को अधिक महत्व दिया जाता है, गति को आकर्षित और संतुलित कर प्रयोग में लाया जाता है। आदिकाल से लेकर समय-समय पर किए गए विभिन्न सांगीतिक प्रयोगों का मंथन करके जब उन्हें निश्चित रूप दिया जाता है, तब वह शास्त्रबद्ध हो जाते हैं। शास्त्रों या ग्रंथों में संकलित नियमों का सहारा लेकर, परंपराओं के अनुसार प्रवाहित होने वाली संगीत प्रणाली को ही 'शास्त्रीय संगीत' के नाम से जाना जाता है। व्यक्ति और समय निरंतर परिवर्तनशील होते हैं और इसलिए उनकी रुचि व सामाजिक परिवेश तथा परिस्थितियों के अनुकूल संगीत के स्वरूप में अंतर होता रहता है। उसी आधार पर समय-समय पर शास्त्रोक्त नियमों में भी परिवर्तन होते रहते हैं, इसीलिए परंपराओं का अनुपालन करते हुए शास्त्रीय संगीत मर्यादित रूप में विकसित होता है और उसमें नित-नूतन आकर्षण भी बना रहता है।

शास्त्रीय संगीत के व्यावहारिक अंग में गायन, वादन, नृत्य के अनेक प्रकार और विविध शैलियाँ समायोजित हैं। इन्हें नियमबद्ध करने की परंपरा अथवा उनका सैद्धांतिक विश्लेषण करने की परंपरा वैदिक काल से चली आ रही है। इसी के अंतर्गत ऋग्वेद मंत्रों में से कुछ मंत्रों को गेय बनाकर *सामवेद* के रूप में संकलित किया गया। वैदिक कालीन पुराणों और ग्रंथों में ही संगीत शास्त्र के सिद्धांतों व नियमों के अंतर्गत तीन सप्तक, सप्तस्वर, तीन ग्राम और उनकी मूर्च्छनाओं का विकास हुआ, इसी के साथ-साथ विभिन्न प्रकार के वाद्य भी विकसित हुए। मध्यकाल से लेकर आधुनिक काल तक शास्त्रीय संगीत में अनेक परिवर्तन आए। गेय विधाओं के अंतर्गत ध्रुपद, धमार, सादरा, खयाल, तराना आदि शैलियाँ प्रचलित हुईं। वाद्य यंत्रों की संरचना एवं बजाने के लिए बहुविध तकनीक अपनाई गई।

चित्र 1.2–शास्त्रीय गायन में तबला और हारमोनियम वाद्यों की संगति

उत्तर भारत में प्रचलित शास्त्रीय संगीत को 'हिंदुस्तानी संगीत पद्धति' के रूप में भी जाना जाता है। इसके अंतर्गत खयाल, ध्रुपद, धमार, तराना इत्यादि गाए-बजाए जाते हैं। दक्षिण भारत में प्रचलित शास्त्रीय संगीत को 'कर्नाटक संगीत पद्धति' कहा जाता है, जिसके अंतर्गत रागम्-तानम्-पल्लवी, वर्णम्, जावलि तथा तिल्लाना आदि विधाएँ समन्वित हैं। यद्यपि श्रुति ही दोनों का आधार है, लेकिन दोनों पद्धतियों में स्वरों की श्रुतियाँ, विधाएँ एवं भाषा भिन्न हैं।

उपशास्त्रीय संगीत

जिन गेय विधाओं में संगीत के नियमों के कठोर पालन की अपेक्षा रस भाव और रंजकता की प्रधानता रहती है, वे उपशास्त्रीय संगीत की श्रेणी में आते है। ऐसी गेय विधाओं में, शब्दों के भावों को स्वरों के विविध अलंकृत प्रयोगों द्वारा व्यक्त किया जाता है। कण, मींड, मुर्की, बोल-बनाव आदि अलंकरण से शब्दों को सौंदर्यपूर्ण रूप में अभिव्यक्त करना उपशास्त्रीय संगीत का विशेष उद्देश्य होता है। ठुमरी, टप्पा, दादरा, उपशास्त्रीय संगीत की महत्वपूर्ण गेय विधाएँ हैं। उपशास्त्रीय संगीत में एक राग से दूसरे राग में जाने की भी स्वतंत्रता होती है। रंजकता और भावाभिव्यक्ति का मूल उद्देश्य होने के कारण छोटे-छोटे स्वर समूहों का समावेश और भावों की सूक्ष्मता और सुकुमारता इस संगीत की विशेषता है।

चित्र 1.3–शास्त्रीय गायन प्रस्तुति

उपशास्त्रीय संगीत के अंतर्गत हिंदुस्तानी संगीत में ठुमरी, दादरा, टप्पा, चैती आदि गायन शैलियों का समावेश है, जिनका विवरण निम्न प्रकार है—

1. **ठुमरी**— ठुमरी एक ऐसी गेय विधा है, जिसमें लोक और शास्त्रीय, दोनों प्रकार के संगीत के तत्व विद्यमान हैं। ठुमरी को शृंगार रस प्रधान शैली माना गया है। इस गेय विधा में स्वर व शब्द एक-दूसरे के पूरक हैं, इसीलिए एक ही शब्द को बोल-बनाव के रूप में विभिन्न स्वर नयी-नयी छवियाँ प्रदान करते हैं। अवध के नवाब वाजिद अली शाह को ठुमरी का विशेष प्रचारक माना जाता है। तब से लेकर आज तक ठुमरी के विविध स्वरूप विकसित होते रहे हैं। ठुमरी में कठिन रागों की अपेक्षा सरल व संकीर्ण प्रकृति के रागों, जैसे— भैरवी, काफ़ी, खमाज, पीलू आदि का प्रयोग होता है। इसमें दीपचंदी, जत, चाचर, कहरवा आदि तालों का प्रयोग होता है। ठुमरी गायन में तबला वादक भिन्न-भिन्न लग्गियों का प्रयोग करते हैं, जिससे ठुमरी गायन का सौंदर्य कई गुना बढ़ जाता है। वर्तमान समय में ठुमरी के दो प्रमुख रूप प्रचलित हैं —

   (i) बोल-बनाव की ठुमरी
   (ii) बोल-बाँट की ठुमरी

2. **दादरा**— दादरा उपशास्त्रीय संगीत की बहुत ही सुंदर व चपल-चलन युक्त विधा है। इस शैली में शब्दों की प्रधानता अधिक होती है। दादरा गीत, दादरा ताल के अतिरिक्त अन्य तालों में भी गाए-बजाए जाते हैं। इसमें ठुमरी के समान फैलावयुक्त बोल-बनाव नहीं होता, परंतु लय के साथ चलते हुए शब्दों व स्वरों को भिन्न-भिन्न रूप से गूँथते हुए भाव

© NCERT not to be republished

की अभिव्यक्ति की जाती है। इसमें एक से अधिक अंतरा गाने का प्रचलन है। यह विधा चंचल होती है, इस विधा में स्वर व लय आधारित शब्दों का प्रयोग इस प्रकार किया जाता है कि दादरा का मूल रूप स्पष्ट होता रहे या जिस ताल का आश्रय लिया गया है, उसकी चाल स्पष्ट होती रहे। दादरा में प्रयुक्त गीत का काव्य वसंत, वर्षा आदि ऋतुओं से या राधा-कृष्ण के शृंगारात्मक वर्णन से संबंधित होता है। दादरा गायन के बीच-बीच में उस विषय से संबंधित दोहे कुछ कवित्त आदि भी गाए जाते हैं, जिनका मूल रचना से सीधा संबंध नहीं होता है। इसमें भी छोटी-छोटी लग्गियों का प्रभावपूर्ण वादन किया जाता है।

3. **टप्पा**— अठारहवीं शताब्दी में लखनऊ के नवाब आसिफुद्दौला के दरबार में एक पंजाबी गायक गुलाम नबी शोरी, जो 'शोरी मियाँ' के नाम से प्रसिद्ध थे, ने टप्पा गायकी को प्रचलित किया। पंजाब प्रदेश से संबंधित होने के कारण ही संभवत: टप्पा गायकी की गीत रचनाओं में अधिकांशत: पंजाबी, सिंधी व मुल्तानी भाषा के शब्दों का प्रयोग होता है। इन दिनों हिंदी व बांग्ला भाषा का प्रयोग भी होने लगा है। इस गायन विधा में शब्द, स्वर व लय, तीनों को कहीं विश्राम नहीं मिलता है। पूरी गायकी छोटी-छोटी द्रुत गति की तानों पर आधारित होती है। टप्पा की उत्पत्ति 'टप' शब्द से हुई है। इस गायकी में कण, खटका व मुर्की का अधिक प्रयोग किया जाता है। काफ़ी, पीलू, खमाज, भैरवी, झिंझोटी आदि रागों में इसे गाया जाता है। इसकी गीत रचना में स्थायी व अंतरा, दो भाग होते हैं। इसके साथ जत, दीपचंदी, चाचर, अद्धा आदि तालों का प्रयोग किया जाता है।

4. **होरी**— उत्तर भारत के विभिन्न क्षेत्रों की लोक भाषाओं में अलग-अलग शैलियों की होरी सुनने को मिलती है। होरी मुख्यत: दीपचंदी, कहरवा, जत ताल आदि में गाई जाती है। होरी शब्द से यह ज्ञात हो जाता है कि इस शैली में होरी से संबंधित प्रसंग, राधा-कृष्ण के होरी खेलने व उनकी छेड़छाड़ इत्यादि का वर्णन किया गया है। यदि उपशास्त्रीय संगीत के अंतर्गत हम होरी गाते हैं तो होरी में छोटे-छोटे शब्द को लेकर तरह-तरह के बोल-बनाव बनाए जाते हैं, जिससे कि शब्दों के भाव स्पष्ट होते रहते हैं, लेकिन जब हम होरी को लोक संगीत के संदर्भ में गाते हैं तो इसमें बोल-बनाव नहीं किया जाता है। यह मूलत: अवधी और ब्रज भाषा में गाए जाते हैं।

चित्र 1.4–वाद्य यंत्र बजाकर नृत्य करते हुए स्कूल के विद्यार्थी

5. **चैती**— चैती अपनी मधुरता, सरलता व कोमलता के लिए जानी जाती है। इसे मुख्य रूप से चैत्र मास में गाए जाने के कारण चैती कहा गया है। 'हो रामा' शब्द इस गीत की विशेष टेक है। चैती भी शृंगार रस से परिपूर्ण गीत है। होली के बाद चैत्र महीने का आगमन होता है; इसी समय चैती गाने का प्रचलन है। चैती को उपशास्त्रीय गायन विधाओं के अंतर्गत रखा गया है— इसमें

एक से अधिक अंतरा गाने का प्रचलन है। राम जन्म से संबंधित गीत भी इसमें गाए जाते हैं। यह मूलत: अवधी भाषा में गाई जाती है।

6. **कजरी**— लोकसंगीत की विधाओं में कजरी भी गायन का एक प्रकार है। यह शृंगार रस से परिपूर्ण गीत का एक प्रकार माना जाता है। कजरी मुख्य रूप से सावन में गाई जाती है। बनारस व मिर्ज़ापुर क्षेत्र कजरी गायन के लिए जाना जाता है। कजरी के गीतों में छंद के अनेक प्रकार देखने को मिलते हैं।

सुगम संगीत

'सुगम' शब्द का अर्थ है 'सरल' या 'सहज', इसीलिए सुगम संगीत का अर्थ है— सरलता या सहजता से गाए-बजाए जाने वाला संगीत। स्वाभाविक है कि इस प्रकार के संगीत में विशिष्ट गेय विधा या शैली के स्वरूप को बनाए रखने के अतिरिक्त किसी अन्य प्रकार के नियमों का बंधन नहीं होता। इस संगीत में यदि राग का आधार लिया गया हो तो भी राग के नियमों में शिथिलता रहती है। भाव प्रदर्शन के लिए यदि आवश्यक हो तो आलाप-तान या स्वरों का प्रयोग गीत के सौंदर्य वर्धन के लिए किया जा सकता है। सुगम संगीत में विशेष तत्व, हाव-भाव, गहराई, रंजकता और सुंदर शब्द इसे विशेष स्थान प्रदान करते हैं। शास्त्रीय या उपशास्त्रीय संगीत के बंधनों से मुक्त इस संगीत के अंतर्गत भजन, पद-गायन, काव्य, गीत, ग़ज़ल आदि का समावेश होता है। कहा जा सकता है कि लय व तालबद्ध कविताएँ, ईश्वर का गुण-गान या महान चरित्रों वाले व्यक्तियों पर आधारित गीत, ऋतुओं से संबंधित गीत, ग़ज़ल आदि सुगम संगीत के अंतर्गत आते हैं। भिन्न-भिन्न प्रदेशों में अपनी विचारात्मक अभिव्यक्ति और भाषाओं के अनुरूप सुगम संगीत अपना आकार-प्रकार ग्रहण करता है।

ये विभिन्न प्रदेशों में अलग-अलग भाषाओं में रचा जाता है। इसके नाम भी भिन्न हैं, जैसे— तमिलनाडु में लिसाई, केरल में ललित संगीतम, बंगाल में आधुनिक गीत, कर्नाटक में लघु संगीत आदि।

लोक संगीत

लोक संगीत का तात्पर्य है— सामान्य जनमानस का संगीत। लोकतंत्र, लोकप्रिय जैसे शब्दों के आइने में इसे देखा जा सकता है। कोई भी व्यक्ति अपने मन के भावों को या दैनिक क्रियाकलापों को स्वर या लय का प्रयोग करते हुए गायन या वादन के माध्यम से अभिव्यक्त करता है तो वह अभिव्यक्ति लोक संगीत में समाहित हो जाती है। भावों की सरलतम एवं मधुरतम अभिव्यक्ति ही लोक संगीत का मूल उद्देश्य होता है। जब भी कोई कला उभरती है, वह सर्वप्रथम लोक ही होती है, बाद में परिष्कृत होकर वह कला शास्त्रीय कला के रूप में स्थापित हो जाती है।

© NCERT not to be republished

व्यक्तियों से मिलकर समाज बनता है और विशिष्ट स्थान के लोगों से निर्मित समाज पर उस स्थान के रहन-सहन, वेशभूषा और रीति-रिवाजों का प्रभाव होता है। जब जीवन से जुड़ी स्थितियाँ, घटनाएँ या जीवन शैलियाँ लोक गीतों के माध्यम से मुखरित होती हैं तो अनायास ही रस की वर्षा करने लगती हैं और मन को मोह लेती हैं। लोक संगीत में आम जन-जीवन के रीति-रिवाज और उसके सामाजिक परिवेश का प्रतिबिंब दिखाई देता है। इन गीतों की धुन सहज और सरल होती है। इन गीतों की रंजकता बढ़ाने के लिए स्थानीय लोक वाद्यों का प्रयोग किया जाता है। लोक संगीत, लोक की चेतना को अभिव्यक्त करता है, इसलिए ये कभी पुराना नहीं होता। कुछ प्रदेशों के प्रचलित लोकगीतों व नृत्य शैलियों के नाम निम्नलिखित हैं—

प्रदेश	गायन एवं नृत्य शैलियाँ
असम	बिहू, छऊ आदि।
उत्तर प्रदेश	होरी, बारहमासा, कजरी, चैती, रसिया, लांगुरिया, बिरहा, रासलीला, नौटंकी के गीत प्रकार आदि।
गुजरात	गरबा, रास, डांडिया आदि।
पंजाब	हीर, टप्पा, गिद्दा, भांगड़ा आदि।
महाराष्ट्र	लावणी, मंगलागौर आदि।
राजस्थान	गोरबंद, मांड, घूमर, झूमर, कालबेलिया आदि।
जम्मू कश्मीर	भाण्ड, पाथिर, रउफ़, जबरो, चकरी आदि।
अरुणाचल प्रदेश	टापू, पोनंग, नीशीदोऊ, लोकूबवांग आदि।
केरल	तिरुवादिरकली, पाना, तुल्लल, थेय्यम आदि।
आंध्र प्रदेश	धिमसा, बुर्रा कत्था, तोलू, बोम्मालता, रोत्तेला पंडुगा आदि।
पश्चिम बंगाल	बाऊल, रबिन्द्र संगीत, भटियाली, गोडीय, छऊ आदि।

किसी भी देश या प्रांत में लोक कलाएँ सांस्कृतिक धरोहर मानी जाती हैं। लोक संगीत को गाने-बजाने के लिए एवं इसकी संरचना हेतु किसी भी तरह के व्याकरण या शास्त्रीय पक्ष के ज्ञान की आवश्यकता नहीं होती है। लोक संगीत किसी विशिष्ट व्यक्ति की रचना नहीं होती है। लोगों के बोल-चाल की भाषा, अंतर्मन के उद्गार या विचारों को सुर एवं ताल में निहित करने को ही लोकगीत कहा जाता है। दक्षिण भारत में लोक संगीत, नाट्टु पाट्टु, नाडोडी पाट्टु, जनपद गीतालु के नाम से जाना जाता है। ज़्यादातर लोक संगीत व्यवसाय, प्राकृतिक विश्लेषण, व्यक्ति विशेषता, रीति-रिवाज की व्याख्या करते हैं, जैसे— फ़सल का रोपण और कटाई, प्रकृति की पूजा, आराध्य देवी-देवताओं का पूजन, समाज की रीतियाँ, शादी-ब्याह, जन्म-मृत्यु इत्यादि लोक संगीत के विषय होते हैं। यह मनोरंजन का एक अपूर्व साधन है, जो मनुष्य जाति को ऊर्जा प्रदान करता है। ज़्यादातर लोक संगीत की रचना गाँव या दूरवर्ती इलाके में होती है। साधारण लोगों द्वारा रची जाने के कारण इसके शब्द सरल लेकिन मार्मिक होते हैं, धुन प्रांत विशेष होते हैं और ज़्यादातर एक ही सप्तक में गाए-बजाए

© NCERT not to be republished

जाते हैं। इसी कारण विशिष्ट समाज की गाथाओं को मानव समाज के समक्ष प्रस्तुत करने में लोक संगीत का अमूल्य योगदान है। लोक संगीत की रचना स्वत: होती है और इसके रचनाकार संगीत में प्रशिक्षित भी नहीं होते हैं। लोक संगीत के गीतों को ऐसे नाम दिए जाते हैं, जिससे विषय-वस्तु को आसानी से भाँपा जा सकता है। दक्षिण भारत में लोक गीतों के नाम हैं— आनन्दकलिप्पु, ओडम नोन्डिचिंदू, लावणी भवई वांछिपाट्टु, ऊन्जलपाट्टु इत्यादि। लोक गीतों में पूरे गीत में धुन और लय एक जैसी रहती है और बहुत वैचित्र्य नहीं दिखाई देता है। कुछ लोक संगीत में रागों के स्वर साफ़ सुनाई देते हैं, लेकिन वे अशोधित होते हैं, जैसे— पुन्नागवराली कुरंजी नीलाम्बरी, नाथनामक्रिया, नवरोज, आनन्द भैरवी इत्यादि। अगर हम कुरम गीतों को सुने तो राग कुरंजी के स्वर समूह साफ़ सुनाई देते हैं। दक्षिण भारतीय लोक गीतों में चापू आदि और रूपक ताल पाए जाते हैं। वास्तव में, चापू ताल और उसकी विभिन्न लयकारी के रूप लोक संगीत में अनेक प्रकार से पाए जाते हैं। लोक संगीत के कलाकार विविध वाद्य बजाने में सक्षम होते हैं। देखा जाता है कि लोक संगीत में तंत्री और सुषिर वाद्य की तुलना में अवनद्ध वाद्य का ज़्यादा प्रयोग किया जाता है।

तंत्री वाद्य, जैसे— एकतारा, तुन्दिना, पुल्लवन्नकुडम नन्दुनी, सारंगी इत्यादि लोकप्रिय वाद्य हैं। सुषिर वाद्यों में, शंख, वेणु, कोम्बू, शहनाई, नादस्वरम, कुरुम कुज़ल, नेडुम कुज़ल तिरुचिन्नम, एककलम, मगुडी दक्षिण भारत के सुपरिचित वाद्य हैं। ढोल, ढोलक, टप्पाताई, तम्बट्टम, तमक्कू, तन्तीपानइ, तविल, उडुक्कु, उरुमी, कुण्डलम, खंजीरा, गुम्माटी इत्यादि प्रचलित अवनद्ध वाद्य हैं। जलरा कुज़ीतालम सेमक्कलम, कइचिलम्बु कुछ प्रचलित लोक वाद्य धातु से बनाए जाते हैं। लोक संगीत के कई प्रकार पाए जाते हैं—

1. **नैतिक गान**— नाम से ही ज्ञात होता है कि समाज में नैतिकता का पाठ पढ़ाते हैं।
2. **काम-काज गीत**— खेती-बाड़ी, मछली पकड़ना, दूध बेचना या ग्वाला का काम करना, ठेला चलाना, नौका गीत— ये गीत विभिन्न तरह के काम-काज का विवरण देते हैं।
3. **वर्षा एवं खेती पर आधारित गीत**— वर्षा के न होने एवं फ़सलों की बुवाई, निराई, कटाई के समय गाए जाने वाले गीत।
4. **लोरी**— बच्चों को सुलाने के गीत।
5. **महत्वपूर्ण व्यक्तियों से संबंधित गीत**— सम्मान, प्रशंसा गीत आदि।
6. **सामूहिक गीत**— समूह में एकत्रित व्यक्तियों के द्वारा गाए जाने वाले गीत, जैसे— देशप्रेम, सांस्कृतिक गरिमा, आध्यात्मिक उपदेशों पर आधारित गीत इत्यादि।
7. **त्यौहारों के गीत**— देश में मनाए जाने वाले विभिन्न त्यौहारों पर गाए जाने वाले गीत।

संस्कार गीत

मानव जाति आपस में संबंध बनाने के लिए संगीत एवं नृत्य का सहारा लेती थी। विकास के साथ मानव ने खेती-बाड़ी का महत्व समझकर उसे अपनाया। खेती करने के लिए मनुष्य प्रकृति

© NCERT not to be republished

पर निर्भर था, इसीलिए धीरे-धीरे उसने प्रकृति की पूजा करना शुरू किया। वर्षा, धूप, आग, जल इत्यादि सभी को वह संतुष्ट रखना चाहता था, क्योंकि वे उसके सुख एवं समृद्धि के लिए आवश्यक थे। समाज के बुद्धिमान एवं प्रभावशाली व्यक्तियों द्वारा कुछ समारोह एवं संस्कारों के प्रथागत एवं पारंपरिक कृत्य संस्कार बन गए। इस प्रकार प्राचीन काल से समीक्षा की जाए तो देखा जाता है कि संस्कारों का पालन समाज का अभिन्न अंग है। रीति-रिवाज इत्यादि संस्कार से ही जुड़े हुए हैं। क्रमश: इन्हें धर्म का नाम दे दिया गया है और उनका पालन करना अनिवार्य माना जाता है।

बहुत-से संस्कार या रीतियाँ हमारे वर्तमान समाज का अभिन्न अंग बन गई हैं। साधारण जनमानस को आकर्षित करने के लिए इन संस्कार रीतियों में संगीत का उपयोग बहुत सामान्य है।

दक्षिण भारतीय संगीत में निम्नलिखित उदाहरण इस तथ्य को और भी स्पष्ट करते हैं—

1. **सोपान संगीतम—** यह संस्कार केरल के मंदिरों में कार्यान्वित है। मंदिर के अंदर जहाँ देवी-देवता विराजमान होते हैं, वहाँ तक पहुँचने की सीढ़ियों को सोपान कहा जाता है। हिंदुओं के इन मंदिरों में जब पूजा के रीति-रिवाज के अनुसार कार्य किए जाते हैं तो मंदिरों की सीढ़ियों पर 'मरार' नामक सम्प्रदाय संगीत प्रस्तुत करता है। इस गायन शैली के साथ इडैक्का बजाया जाता है। इस पवित्र प्रथा में 'गीत गोविन्दम' जो 'अष्टपदी' नाम से विख्यात है, भी प्रस्तुत किया जाता है। सोपान संगीत की गायन शैली, राग, ताल सभी को दूसरी शैलियों को प्रस्तुत करने के लिए अपनाया गया है, जैसे— कृष्णनाट्टयम, कथकली और अष्टपदीथाट्टम।

चित्र 1.5– नृत्य की भंगिमा में प्राचीन मूर्तिकला

2. **तेवारम, तिरुवाचकम—** तमिलनाडु के शैव समुदाय के लोग इन शैव स्तोत्रों को गाते-बजाते हैं। ओदुवार नामक समुदाय में इन स्तोत्रों को अप्पर, तिरुज्ञान समबन्धर, सुन्दरमूर्ति द्वारा रचित किया गया और इन्हें शैवीय संस्कार के लिए पेश किया जाता है। इनके राग और ताल प्राचीन तमिल शास्त्रीय संगीत में पाए जाते हैं। भगवान शिव के लिए रचे गए कवि एवं साधु माणिक्यवाचकर द्वारा इसी संस्कार में बीस पंक्तियों की एक और अन्य शैली का प्रदर्शन किया जाता है, जिसे तिरुवेम्पावइ नाम से जाना जाता है।
3. **तिरुप्पावइ एवं अन्य दिव्य प्रबंध—** मुडियेत्तु, अयप्पन पाट्टु, भगवती पाट्टु, सर्पम पाट्टु, नावोरू इत्यादि दक्षिण भारत की सांगीतिक रचनाएँ, विभिन्न देवी-देवताओं की पूजा अर्चना के लिए गाई-बजाई जाती हैं। पुल्लुवन्कुडम, उडुक्कु, नादस्वरम, तविल इत्यादि वाद्य यंत्रों का प्रयोग भी उपरोक्त दिए गए संस्कार गीतों के साथ संगत के लिए प्रयोग किए जाते हैं।

अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न

1. *संगीत रत्नाकर* के अनुसार 'संगीत' की परिभाषा बताइए।
2. कर्नाटक संगीत पद्धति में प्रचलित विधाएँ कौन-सी हैं?
3. हिंदुस्तानी संगीत पद्धति की प्रचलित विधाएँ बताइए।
4. उपशास्त्रीय संगीत की गायन शैली टप्पा की रचनाओं में अधिकांशत: किन भाषाओं के शब्दों का प्रयोग होता है?
5. दक्षिण भारत के पाँच राज्यों में प्रचलित किन्हीं पाँच लोकगीतों के नाम बताइए।
6. लोक संगीत का मूल उद्देश्य क्या है?
7. ठुमरी के प्रचलित प्रमुख दो रूप कौन-से हैं?
8. दक्षिण भारतीय लोक संगीत की प्रमुख तालें कौन-सी हैं?

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. तिरुवेम्पावई नामक शैली को विस्तार से समझाइए।
2. उपशास्त्रीय संगीत की परिभाषा बताते हुए इसकी पाँच विधाओं के नाम बताइए।
3. लोक संगीत को पारिभाषित करते हुए इसमें प्रयुक्त होने वाले प्रमुख तंत्री, सुषिर एवं अवनद्ध वाद्यों के नाम बताइए।
4. उपशास्त्रीय संगीत गायन शैली 'टप्पा' को विस्तारपूर्वक समझाइए।
5. ललित कलाएँ कितने प्रकार की होती हैं? इन कलाओं में किस को श्रेष्ठतम माना गया है?

सही और गलत बताइए

1. संगीत एक ऐसी औषधि है, जो मनोवैज्ञानिक रूप से चित्त को एकाग्र कर, संतुलित बनाने की क्षमता रखती है।
2. शोरी मियाँ को ठुमरी का विशेष प्रचारक माना जाता है।
3. उपशास्त्रीय संगीत में एक राग से दूसरे राग में जाने की स्वतंत्रता नहीं होती है।
4. ठुमरी एक ऐसी विधा है, जिसमें लोक और शास्त्रीय, दोनों प्रकार के संगीत के तत्व विद्यमान हैं।
5. ऋग्वेद मंत्रों में से कुछ मंत्रों को गेय बनाकर सामवेद के रूप में संकलित किया गया है।
6. ढोलक, उडुक्कू एवं गुम्माटी एक प्रकार के सुषिर वाद्य हैं।
7. 'हो रामा' शब्द चैती नामक गीत की विशेष टेक है।
8. दादरा गीत, दादरा ताल के अतिरिक्त अन्य किसी ताल में गाए-बजाए नहीं जाते हैं।

© NCERT not to be republished

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

1. गायन, वादन तथा नृत्य के समावेश को ------------------------------ कहते हैं।
2. संगीत की दोनों पद्धतियों का आधार ------------------------------ है।
3. नवाब वाजिद अली शाह को ------------------------------ का प्रचारक माना जाता है।
4. चैती को ------------------------------ माह में गाया जाता है।
5. राजस्थान का लोकप्रिय लोकनृत्य ------------------------------ है।
6. सोपान संगीतम के अंतर्गत मंदिरों की सीढ़ियों पर ------------------------------ नामक संप्रदाय संगीत प्रस्तुत करता है।

सुमेलित कीजिए

(क) ललित कला	1. शोरी मियाँ
(ख) हिंदुस्तानी संगीत	2. जम्मू कश्मीर
(ग) ठुमरी	3. अवनद्ध वाद्य
(घ) पल्लवी	4. मिर्ज़ापुर
(ङ) टप्पा	5. सुषिर वाद्य
(च) कजरी	6. अष्टपदी
(छ) गोडीय	7. धातु वाद्य
(ज) चकरी	8. ध्रुपद
(झ) कोम्बू	9. कर्नाटक संगीत
(ण) तन्तीपानई	10. पश्चिम बंगाल
(ट) कइचिलम्बु	11. मूर्तिकला
(ठ) गीत गोविन्दम	12. नवाब वाजिद अली शाह

विद्यार्थियों हेतु गतिविधि

1. अपने परिवेश में होने वाले समारोहों या उत्सवों में बजाए जाने वाले विभिन्न वाद्यों के छायाचित्रों का संकलन कर, अध्याय 'भारतीय संगीत का सामान्य परिचय' में वर्णित वाद्य-वर्गीकरण के

© NCERT not to be republished

आधार पर वर्गीकृत करें। समारोहों व उत्सवों में संगत या स्वतंत्र वाद्य-वादन करने वाले कलाकारों का संक्षिप्त साक्षात्कार करके निम्न बिंदुओं पर चर्चा कर विवरण एकत्र कीजिए—

- कलाकारों की जीविका के अन्य स्रोत
- कलाकारों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि व रहन-सहन
- विश्व के मानचित्र पर इनके पारंपरिक संगीत का चित्रण एवं महत्व

2. वर्तमान समय में प्रचलित 'सोशल-नेटवर्किंग साइट्स', जैसे— यू-ट्यूब, फ़ेसबुक और इन्स्टाग्राम आदि पर पाई जाने वाली विभिन्न शास्त्रीय व लोक शैलियों की प्रस्तुतियों का आकलन कर निम्न बिंदुओं को स्पष्ट कीजिए—
    - शैली का विवरण एवं पृष्ठभूमि
    - शैली में प्रयुक्त ताल एवं वाद्यों का विवरण
    - प्रस्तुति में प्रयोग किए गए विभिन्न ध्वनि यंत्रों (sound equipment) का संक्षिप्त विवरण
    - प्रस्तुतिकरण में मंच सज्जा एवं वेशभूषा का महत्व

3. नीचे दिए गए नृत्य प्रकारों एवं गीत शैलियों का उपयोग करते हुए रिक्त स्थानों को भरिए। (उत्तर कुंजी पहेली संख्या 1 पृष्ठ संख्या 92 देखें)

   बिहू, हीर, ध्रुपद, तिल्लाना, कालबेलिया, बारहमासा, कजरी, लांगुरिया, गोरबंद, होरी, घूमर, जावली, वर्णनम्, तानम्, रागम्, लावनी, रासलीला, तराना, पल्लवी, सादरा, गरबा, होरी

	बि	हू	ही		का				
		ग							
	ध्रु								
	गो								
बा			मा			घू			
			डां			जा		ता	
				रा		व			म्
लां		रि			हो			म्	
			क						

© NCERT not to be republished

सामता प्रसाद मिश्र उर्फ़ गुदई महाराज

चित्र 1.6–सामता प्रसाद मिश्र

बनारस घराने के प्रसिद्ध तबला वादक पंडित सामता प्रसाद उर्फ़ गुदई महाराज का जन्म बनारस में 20 जुलाई, 1921 को हुआ था। इनके पिता पंडित बाचा मिश्र भी अच्छे तबला वादक थे। अत: सामता प्रसाद मिश्र की शिक्षा की शुरुआत उन्होंने ही की थी, किंतु यह जब मात्र छह वर्ष के थे तभी इनके पिता का निधन हो गया। अत: इनकी शिक्षा का दायित्व इनके मौसेरे भाई पंडित विक्रमादित्य मिश्र उर्फ़ खलीफ़ा पंडित बिक्कू महाराज ने अपने ऊपर ले लिया। पंडित बिक्कू महाराज की गहन देख-रेख में, 15–16 घंटे के प्रतिदिन के अभ्यास ने पंडित सामता प्रसाद में असीमित ऊर्जा का संचार कर दिया। इनका बचपन बहुत निर्धनता में बीता। उन दिनों आर्य समाज के जुलूस में, यह बैलगाड़ी पर बैठकर तबला बजाया करते थे, लेकिन 1942 में, जब इन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित अखिल भारतीय संगीत सम्मेलन में, उस्ताद अलाउद्दीन खाँ के साथ अपना जादुई तबला वादन प्रस्तुत किया तो लोगों ने इन्हें बहुत पसंद किया। उसके बाद इन्हें पीछे मुड़कर देखने का अवसर नहीं मिला। तिरकिट, तकतक, धिनगिन और धिरधिर, किटितक जैसे बोलों पर इनका विशेष प्रभुत्व था। बायें की स्याही का भाग अपनी ओर रखकर इन्होंने उसमें जो गूँज पैदा की वह असामान्य थी, कई लोगों ने इस खूबी को अपनाने की कोशिश की है। साधारण और विशेष, इनके तबले की चटक और टनक प्रत्येक व्यक्ति को अपनी ओर आकर्षित कर लेती थी।

दिल्ली के विज्ञान भवन में इनका चमत्कारिक तबला वादन सुनकर रूस के राष्ट्रपति क्रुश्चेव इतने प्रभावित हुए कि रूस के मई दिवस के प्रसिद्ध समारोह में इन्हें आमंत्रित किया गया। वहाँ दुनियाभर के शासनाध्यक्षों ने इनका वादन सुना और उनका लोहा माना। यहीं से सामता प्रसाद, विश्व रंगमंच पर प्रसिद्ध हो गए। भारत के लगभग सभी बड़े संगीतकारों के साथ इन्होंने लगभग सभी बड़े मंचों पर अपना वादन प्रस्तुत किया। गायन और नर्तन तीन विधाओं की सफल संगति करने के साथ-साथ मुक्त तबला वादन में भी यह अपना विशिष्ट स्थान रखते थे। मेरी सूरत तेरी आँखें, बसंत बहार, सुरेर व्यासी, जलसा घर, झनक-झनक पायल बाजे, महबूबा, किनारा और शोले आदि जैसी अनेक फ़िल्मों को भी अपने जादुई तबला वादन से इन्होंने सजाया था।

गुदई महाराज तबले का जादूगर, ताल मार्तण्ड, ताल शिरोमणि, तबला विजार्ड, ताल विलास, तबला सम्राट, संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार, हाफ़िज़ अली खाँ सम्मान और पद्मश्री तथा पद्मभूषण के अलंकरण से अलंकृत थे। इनके दोनों पुत्र पंडित कुमार लाल मिश्र और कैलाश नाथ मिश्र, अच्छे तबला वादक हैं। शिष्यों में जे. मेसी, पार्थ सारथी मुखर्जी और सत्य नारायण वशिष्ठ के नाम प्रमुख हैं। पंडित सामता प्रसाद गुदई महाराज का आकस्मिक निधन 21 मई, 1994 को पुणे में हुआ। वह वहाँ एक कार्यशाला में भाग लेने के लिए गए थे, जहाँ हृदय गति रुक जाने से उनका देहांत हो गया।

© NCERT not to be republished